साहित्य समाज का अंग है, या समाज साहित्य का इस विषय का विचार तो गंभीर है, किन्तु काल सबका आधार है जिसे कुछ लोग युग कहते हैं वह भी काल का एक अंश ही है। ईश्वर नहीं बदलता उसके नियम भी यथावस्थित ही रहते हैं। काल में परिवर्तन अवश्य होता है। साहित्य भी कभी कभी काल के प्रतिबिम्ब का अनुसरण करता है। तपस्वी कर्दम ऋषि ने भगवान से प्रार्थना की कि मैं एक स्त्री का इच्छुक हूँ। भगवत्प्रेरणा से बिन्दुसरोवर पर एक दिन महाराज मनु अपनी रानी शतरूपा तथा पुत्री देवहूति के साथ उस आश्रम पर आये और अपनी कन्या देवहूति को कर्दम के लिए प्रदान किया। ऋषि का और कोई आग्रह नही था। दहेज जैसा कि आज के युग में माँगने की प्रथा प्रचलित है। इसी प्रकार सौभरि ऋषि भी तपस्वी एवं विद्वान थे। उनके तंत्र ग्रंथो में मातृका वर्णमाला है। एक दिन यमुना के तट पर ऋषि जप कर रहे थे कि सहसा उनका ध्यान जल में क्रिडा करते हूए मत्स्य युगल पर चला गया। ऋषि विचलित हो गये, उनको भी स्त्री के साथ क्रीडा करने की इच्छा हुई और वे राजा मांधाता के पास पहुँचे। ऋषि ने राजा से एक कन्या की याचना की, राजाने कहा- मुनिवर, आप मेरे महल में चले जाइये वहाँ पर जो कन्या आपको स्वीकार करे आप उसे ले जाइये। ऋषि ने राजभवन में जाकर अपने सौन्दर्यबल से सभी कन्याओं को मोहित कर दिया, जिसके फलस्वरूप वे सभी राजकन्याएँ उनके साथ चल पडीं। सौभरि ने अपने तपोबल से उन सभी पाणिगृहीती भार्याओं के सुखभोग साधन का निर्माण कर दिया। अनेक दास दासी वाहन आदि। सौभरि ने दहेज राजा से नही मांगा था। यद्यपि द्वापर में देवकी के विवाह में राजा देवक ने हाथी घोडा वाहन आदि स्वर्ण द्रव्य वसुदेवजी को दिया था। जिसका उल्लेख श्रीमद्भागवत में मिलता है। ठीक है। पर वहाँ भी द्रव्य पक्ष गौण है, मुख्य लक्ष्य तो केवल कन्याप्राप्ति ही है। प्राचीन काल में यह दुराग्रह नहीं था। यदि कन्या के पिता की श्रद्धा हो, शक्ति हो तो अपनी इच्छा से धन प्रदान करता था। वर्तमान युग में तो "सर्वे गुणा: काञ्चनमाश्रयन्ति" सिद्धान्त की प्रबलता है। पहिले धर्म से अर्थ की प्राप्ति होती थी। आजकल अर्थ से धर्म की प्राप्ति होती है। इस समय तो अर्थ से हीन ईश्वर को

"वैदिक युग की दहेज प्रथा का स्वरूप"

भी अमान्य कर दिया जाता है। चार्वाक जैसा सिद्धान्त ईश्वर नहीं है। क्योंकि वह प्रत्यक्ष नहीं है। चमत्कार को नमस्कार किया जाता है। अर्थ से मुख्य संबंन्ध हो गया है। हमारे शास्त्रों मे वेदों में दहेज प्रथा का उल्लेख नहीं मिलता है। दान के महत्व का वर्णन मिलता है। और साथ में यह भी प्रति पादन है कि दान सत्पात्र को ही देना चाहिये। अपात्र को दान देने मे महारौरव अंधतामिस्त्रादि नरकों की प्राप्ति होती है। कन्यादान का महत्व शास्त्र में इस प्रकार है "गौरीं ददन नागलोके वैकुंठे रोहिणीं ददन्" गौरी (आठ वर्ष की कन्या) दान करने से नागलोक की प्राप्ति तथा रोहिणी (न वर्षकी) के दानसे वैकुण्ठ लोककी प्राप्ति होती हैं। किन्तु यह दान किसी सत्पात्र को करना चाहिये। ऐसा न करने से नरक की प्राप्ति होती है। उक्त दान का उल्लेख तो मिलता है। पर किसी को आत्मपीडा पहुँचाकर द्रव्य लेना या दान प्राप्त कन्या को कष्ट देना इत्यादि बातें भारतीय संस्कृति के ग्रंथो में कहीं भी नहीं है। कन्या रत्न द्रव्य उस द्रव्य के अतिरिक्त अद्रव्य है। आधुनिक प्रथा दहेज तो वर के माता पिता बान्धवों के लिए होता है। निरूक्त तें भी भाष्य में लिखा है- स्त्री तू निसर्गेणैव दीयते विक्रीयते विसृज्यते सा हि परार्थमेवोत्पद्यते इत्यभागा भवति। कन्यारूपिणी स्त्री दूसरे के लिये ही उत्पन्न होती है। तथा वह स्वभावत: ही दान के योग्य है। अत: उसकी कोई माँ नही होती है। अत: यह सिद्ध हुआ कि विवाह में दहेज प्रथा अशास्त्रीय है। कन्या का विक्रय भी शास्त्र निषिद्ध है- " न कन्याया: पिता विद्वान गृहीयाच्छल्कमण्वपि"। कन्या के पिता को थोडा भी शुल्क नहीं लेना चाहिये। "दद्यात् गुणवते कन्यां न त्वेवं गुणहीनाय" इत्यादि वाक्यों के आधार पर कन्यादान ग्रहण का अधिकारी वही है जो काम, क्रोध, लोभ आदि दुर्व्यसनों से रहित हो। कन्या का वाग्दान (सगाई) हो जाने पर यदि कोई बलात् अपहरण करता है तो उसको चोर

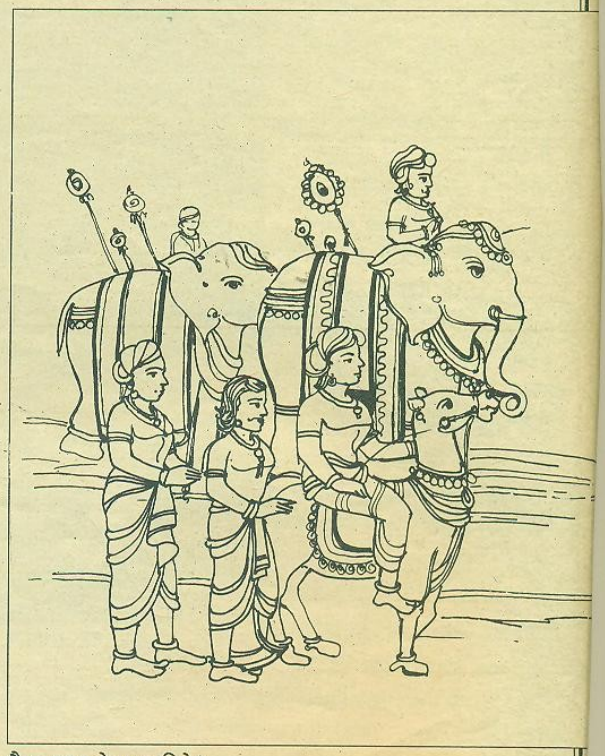

जैसा दण्ड देना चाहिये।

"सकृत प्रदीयते कन्या, हरँस्ताँ चौरदण्डभाक्।" यदि कन्या में कोई दोष हों , उसे कन्या का पिता वर को कन्या देता है तो उस स्थिती में कन्यापिता भी दण्ड्य है, " अनाख्याय ददद् दोष एण्एय उत्तमसाहसम्। इसी प्रकार यदि वर में दोष है तो वह भी दण्ड्य है। तथा उसे स्त्री नही मिलेगी. "गूहयित्वऽऽत्मनो दोषं द्विगुणं विन्दते दम:। वरस्यं दत्तनाशश्च भवेत् स्त्री च विवर्तते"। ।।नारदस्मृति।।

वर को अपने यहाँ बुलाकर यथाशक्ति अलंकृता कन्या का उसको प्रदान करना ब्राह्म विवाह कहलाता है। - "श्रुतशीके विज्ञानय ब्रह्मचारिणेऽ र्थिने देयेति ब्राह्म:" हारीत के मत से "विधिवद् वस्त्रयुगं

दत्वा सहधर्मश्चर्यताम्" विधिपूर्वक अपने अपने धर्म का पालन करें" हारीत के वचनानुसार गौ (मिथुन जोडा) वर के कन्यादान के अवसर पर देना दैव विवाह है। गोमिथून वर से लेकर कन्यादान करना चाहिये। कुछ आचार्यो के मत से गोमिथुनका दान वर को ही देना चाहिये। कल्पतरू कार के मत से कन्यादान के साथ वह गोदान कन्या का ही धन होता है। प्राजापत्य विवाह में भी वर और कन्या का परस्पर सद्धर्माचरण का ही विधान है। राक्षस पैशाचादि विवाह निंद्य माने हैं। इन सब विवाह प्रभेदों में मुख्य लक्ष्य कन्या का ही हैं। कहीं पर भी दहेज को मुख्यता नहीं दी है। दहेज शब्द आधुनिक अर्थ साम्राज्य का कर्मचारी पारिभाषिक है, जिसका अर्थ होता है, बलात् धन का अपहरण करते हुए कन्या को स्वीकार करना दहेज शब्द दहन का ही अपभ्रंश है। कन्या के पिता के अन्त:करण कहा दहन ही दहेज है।

आसुरो द्रविणादानात्" द्रव्य लेने से आसुर विवाह कहलाता हे। अत: दहेज प्रथावाले विवाह सभी आसूरी हैं। हमारी संस्कृति की शिष्टता शुद्ध एवं पवित्र है जब दो पक्षों में संबंन्ध हो गया तो प्रेमशृंखला का बंधन होता है। वर के पिता और कन्या के पिता परस्पर

संबंधी कहलाते है। संबंधी का अर्थ है" समा धी: यस्य स:" जिसकी बुद्धि में समानता हो किसी भी कारण विषमता न आवे परन्तु यहाँ तो विषमता ही नही परम विषमता एवं शत्रुता आ जाती है। जिसका दुष्परिणाम घोर लोक निन्दा भी होने लगती है। इन सब बातों से बचने के लिए "ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं कूलम्। तयामैत्री विवाहश्चन तु पुष्टविपुष्ट्यो:" जहाँदोनो पक्षोमें धन, और कुल की समानता हो वहीं पर मित्रता तथा विवाह कार्य करना चाहिए। सम एवं विषम का संबंन्ध ही हानिकारक होता है।

भारतीय समान के उत्थान के लिये "आत्मवत् सर्वभूतेषु" की भावना को लेकर परस्पर प्रेम संवर्धन ही राष्ट्र की सेवा है। दहेज जैसी कुरीतियों का निष्कासन ही देश का उद्धार है। पाणिनि सूत्र "कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानम्" "विप्राय गां ददाति।" ब्राह्मण के लिये गाय का दान करता है। यहाँ पर कर्म से अभिप्रेत इष्ट ब्राह्मण को दान है। उस दान को वापिस नहीं लेना है। तथा "रजकस्य वस्त्रं ददाति" धोबी को कपडे देता है। किन्तु धोबी से कपडे धुलाकर वापिस लेना है। न कि कपडे का दान किया गया है। इन स्थलों पर संप्रदान (दान) अर्थ में चतुर्थी विभक्ति होती है अन्यथा नहीं। कन्या दान या कन्याके निमित्त यथा शक्ति श्रद्धापूर्वक दी गई वस्तू ही कन्यादान है। बलात् या दबाव से लिया गया द्रव्य आदान है तथा उसे वर विक्रय भी कह सकते हैं।

वर विक्रय और कन्या विक्रय दोनों ही शास्त्र विरूद्ध हैं।

श्री राधाकृष्ण शास्त्री-मथुरा